शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मार्च 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

श्वेताश्वतरोपनिषद् में ब्रह्म-तत्त्व-विवेचन

भारत भूषण सिंह (शोधार्थी)
योग एवं दर्शनशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट, सतना, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

उपनिषदों में भारतीय संस्कृति का सर्वोच्च चिंतन दृष्टिगोचर होता है। वेदों की गहन गंभीर गुफाओं से उपनिषदों के रूप में सुन्दर मीठे जल के स्रोत निकले हैं। इसे भारतीय संस्कृति को परिपुष्ट किया है। मनुष्य समाज की कल्पना के ऊँची उडान के दर्शन औपनिषदिक चिंता में होते हैं। उपनिषदों में ब्रह्म-तत्त्व का विवेचन अनेकानेक रूपों में किया गया। श्वेताश्वतरोपनिषद में ब्रह्म का महत्व विशेष रूप से प्रतिपादित किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी ब्रह्म-तत्त्व पर विचार किया गया है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् में ब्रह्म

श्वेताश्वतरोपनिषद् में ब्रह्म का ही महत्त्व प्रतिपादित किया गया है और ध्यानयोग के द्वारा ब्रह्मवादी ऋषियों ने यह जाना[1] कि न तो इस संसार का कारण काल, स्वभाव, नियति, यदृच्छा, पञ्चमहाभूत(पृथ्वी, जल, तेज, वायु व आकाश), योनि (माता-पिता), पुरुष (जीवात्मा) और संयोग आदि आठ कारण हैं अपितु काल से लेकर आत्मापर्यन्त कारणों का अधिष्ठाता केवल महान् अकेला ही ब्रह्म जगत् का कारण है।[2] इसीलिए कहा गया है कि 'उस परमपिता परमात्मा का कोई स्वामी नहीं है। उस पर कोई शासन करने वाला नहीं है। उसका कोई लिङ्ग(चिह्न) नहीं है। क्योंकि वह स्वयं सृष्टि का निर्माता है। इस सृष्टि के साधनों का भी स्वामी है।[3]

ऐसे इस ब्रह्म के स्वरूप के विषय में कहा गया है कि 'ब्रह्म शब्द की व्युत्पत्ति में ही ब्रह्म के स्वरूप का प्राकट्य है- **बृंह धातु वर्धमान= वृद्धिमान् अर्थ में प्रयुक्त होती है, जो निरतिशय महत्त्व की दृष्टि से वृद्धिमान अर्थ में प्रयुक्त होती है, जो निरतिशय महत्त्व की दृष्टि से वृद्धिमान है वह ब्रह्म है।**[4] अर्थात् जो सत्ता सर्वत्र विद्यमान है, शाश्वत है, अपरिवर्तनशील है वह ब्रह्म है।

कठोपनिषद् कहती है कि वह (ब्रह्म) शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध रहित है, अनादि है, अनन्त है, उसका साक्षात्कार करने वाला मृत्यु के मुख से मुक्त हो जाता है अर्थात् मोक्ष प्राप्त कर लेता है।[5]

छान्दोग्योपनिषद् में उस ब्रह्म की उपासना करने का निर्देश इस तथ्य के साथ दिया गया है कि वही सब जगह है, उसी से सभी जन्म पाते हैं, उसी में स्थित रहते हैं और अन्त में उसी में विलीन हो जाते हैं।[6] श्रुतिवचनों में ब्रह्म को सत्-चित्, आनन्द, सत्य, ज्ञानवान्, अनन्त तथा विज्ञानवान् और आनन्दमय कहा गया है।[7]इसी प्रकार ब्रह्म को जन्म, स्थिति और प्रलय का निमित्त कारण भी कहा गया है।[8]

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मार्च 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

अन्नपूर्णोपनिषद् में ब्रह्म शब्द की निरुक्ति में कहा गया है कि 'विशाल आकार वाला यह ब्रह्म से बड़ा और सर्वत्र स्थित है अर्थात् बड़ा और विशाल होने के कारण ही यह ब्रह्म नाम से अभिहित है।'[9]

श्वेताश्वतरोपनिषद् में ब्रह्म

इस प्रकार ब्रह्म के स्वरूप, लक्षण और उसकी महिमा के परिप्रेक्ष्य में श्वेताश्वतर में कहा है कि 'निष्कल, निष्क्रिय, सदा शान्तस्वरूप, निर्दोष, निरञ्जन(निर्मल), मोक्ष के परमसेतु' ब्रह्म को अनिर्वचनीय कहा गया है।[10]यह अनिर्वचनीयता ही वेदान्त की चरमसीमा है। उसकी अनिर्वचनीयता बताने के लिए ही निषेधात्मक शब्दों का प्रयोग हुआ है। उपनिषदों में विशेषणों का आरोप होने से निर्गुण भावना के साथ एक प्रकार की सकारात्मकता संलग्न प्रतीत होती है। वह सर्वेन्द्रिय गुणाभास होकर भी सर्वेन्द्रियवर्जित है।[11]

ब्रह्म का परिमाण

ब्रह्म के परिमाण के विषय में श्वेताश्वतर ऋषि कहते हैं कि वह अंगुष्ठमात्र है और उसकी स्थान हृदय को कहा गया है।[12]

सगुण निर्गुण परमेश्वर के विरोधी दो स्वरूप- सगुण और निर्गुण कैसे हो सकते हैं? वह ब्रह्म ही मूर्त्त और अमूर्त्त रूपों में व्यक्त होकर सृष्टि अथवा जगत् के रूपों में उपलब्ध होता है।[13]

माया शब्द का प्रयोग यद्यपि बृहदारण्यकोपनिषद् में हुआ है[14] तथापि माया और प्रकृति का एकार्थक प्रयोग श्वेताश्वतर में हुआ है। श्वताश्वतरोपनिषद् में ईश्वर को प्रथम बार सृष्टि के सम्बन्ध में 'मायावी' कहा गया है।[15] ईश्वर सगुण और ब्रह्म निर्गुण है। इस प्रकार गुणसम्बन्धी परम्परा प्रकृति सिद्धान्त द्वारा विकसित हुई है। गीता में भी कहा गया है कि 'अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया से प्रकट होता है।[16]' श्वेताश्वतर में भी कहा गया है कि 'अपने गुणो से आच्छादित ब्रह्मस्वरूप आत्मशक्ति का साक्षात्कार हुआ।'[17]

अतः निर्गुण, निराकार, निर्विकार ब्रह्म माया (प्रकृति) द्वारा ही सगुण साकार सविकार बना। निर्गुण और निराकार ब्रह्म ही शक्तिमत्ता द्वारा अनेक रूपों में व्यक्त हो गया है। माया या प्रकृति के साथ ब्रह्म का स्वरूप सन्निकृष्ट है। माया या प्रकृति शक्तिमान् ईश्वर की शक्ति और स्वाभाविक क्रियाएँ हैं।[18] शक्ति के योग से एक अवर्ण बहुरूप हो जाता है। अर्थात् उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय देखने में पृथक्-पृथक् प्रतीत होते हैं। परन्तु ये सब क्रियाएँ एक सत्य के द्वारा ही संक्रमित होती हैं।[19] वही भोक्ता, वही भोग्य और उसका प्रेरक भी है। इस प्रकार एक ब्रह्म के तीन आकार प्रत्यक्ष होते हैं। यह त्रैतसमुदाय- जीव, ब्रह्म और प्रकृति है। इस त्रैत का केन्द्र ब्रह्म ही है। इसीलिए तो श्वेताश्वतर कहती है- 'सदा संयुक्त रह कर मैत्रीभाव से एक साथ रहने वाले दो पक्षी (जीवात्मा और परमात्मा) एक ही वृक्ष (शरीर) का आश्रय लिये हुए रहते हैं। उनमें एक (जीवात्मा) तो उस वृक्ष के फलों (कर्मफलों) का स्वाद लेकर खाता, किन्तु दूसरा (परमात्मा) उनका उपभोग न करता हुआ केवल देखता रहता है।[20]

वह कर्माध्यक्ष है

उस परब्रह्म परमात्मा के लिए कहा गया है कि वह सब भूतों में व्याप्त है। वह हमारे कर्मों का साक्षी है और निर्गुण है।[21] वह अणु से भी सूक्ष्म और महान् से भी महान् है।[22] वह समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर भूत, भविष्यत् वर्तमान सबका ज्ञाता है। वह ब्रह्म हाथ-पाँव रहित होकर भी वेगवान् होकर भी सुनता है। वह सम्पूर्ण

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मार्च 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

ब्रह्माण्ड को जानता है किन्तु उसे कोई नहीं जानता। वह प्रभु महान् है।[23] वस्तुतः अखिल ब्रह्माण्ड उससे व्याप्त है। ईशोपनिषद् भी कहती है जगती में जो जगत् है वह ईश्वर से व्याप्त है।[24]

सृष्टि का रचयिता

वह ब्रह्मा एक होकर भी अपनी शक्ति से नानाविध संसार का प्रादुर्भाव करता है।[25]

उसके अनेक नाम हैं

उस ब्रह्म को ज्ञानीजन अनेक नामों से पुकारते हैं कोई अग्नि, आदित्य, वायु, चन्द्रमा और शुक्रादि के नाम से उसे कहते हैं।[26] कोई उसे रुद्र व शिव नाम से भी कहते हैं। ये सब नाम उसकी विविध प्रकार की शक्तियों के द्योतक हैं।[27]

उस ब्रह्म की महिमा का वर्णन करते हुए कहा कि जगत् का निमित्त कारणभूत जो परमात्मा प्रत्येक वस्तु के स्वभाव को स्थिर करता है। अकेला ही समस्त संसार का नियमन करता है और जो समस्त गुणों को अनेक कार्यों में नियुक्त करता है, वह परम ब्रह्म है।[28]

वही ब्रह्म नित्यों का नित्य है, चेतनों का चेतन है, जो सांख्य और योग द्वारा जाना जाता है, वही सृष्टि को व्यावृत करने में कारण है, उसे जानकर ही मुक्ति मिल सकती है।[29] उसे ही प्रज्ञा बुद्धइ से जानकर विद्वान् पुरुष अमर हो जाते हैं। अमरत्व प्राप्ति का इससे अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है।[30]

ब्रह्मप्राप्ति का सरल मार्ग

उस महान् ब्रह्मतत्त्व को प्राप्त करने का जहाँ ध्यान योग का मार्ग बताया गया, वहीं उसे प्राप्त करने का अत्यन्त सरल मार्ग बताते हुए कहा गया है कि जिस साधक की उस परमात्मा में अत्यन्त भक्ति है, वह अपनी आत्मा में उसका प्रकाश पा लेता है।[31]

सन्दर्भ सूची

1 तं ध्यानयोगानुगता अपश्यन्।। श्वे. 1.3

2. (क) कालः स्वभावो निपतिर्यदृच्छया भूतानि योनिः पुरुष इति चिन्त्यम्।
संयोग एषा न त्वात्मभावादात्माप्यनीशः सुखदुःखहेतोः।। श्वे. 1.2
(ख) ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन्देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम्।
स कारणं निखिलानि तानि कालान्मयुक्त्यान्यधितिष्ठत्येकः।। श्वे. 1.3

3. न तस्य कश्चित्पतिरस्ति लोके न चेशिता नैव च तस्य लिङ्गम्।
स कारणं कारणाधिपाधिपो न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः।। श्वे. 6.9

4. बृंहति वर्द्धत निरतिशयमहत्त्वलक्षणवृद्धिमान् भवतीत्यर्थः।। शब्दकल्पद्रुम

5.अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते।। कठ. 1.3.15

6.सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्तमुपासीत।। छान्दो. 3.14.1

7.सच्चिदानन्द ब्रह्म सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म, विज्ञानमानन्दं ब्रह्म।

8.यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते।
येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्याभि संविशन्ति। तद्विजिज्ञासत्व तद्ब्रह्म।। तैत्ति.311

9.ब्रह्मेदं बृहदाकारं बृहद् बृहदवस्थिताम्।
बृहत्वात् बृहणत्वाच्च तद्ब्रह्मेति प्रकीर्तितम्। अ.पू. 3.2.30

11 निष्कलं निष्क्रियं शान्तं निरवद्यं निरञ्जनम्।
अमृतस्य परं सेतुं दग्धेन्धनमिवानलम्।। श्वे. 6.19

12 सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत्।। श्वे. 3.101

13 अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा सदा जनानां हृदये संनिविष्टः।। श्वे. 3.13, 5.8

14 छन्दांसि यज्ञाः क्रतवो व्रतानि भूतं भव्यं यच्च वेदा वदन्ति।
अस्मान्मायी सृजते विश्वमेतत्तस्मिंश्चान्यो मायया संनिरुद्धः।। श्वे. 4.9

15 इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते।। बृहदा. 2.5.19

16 मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तं महेश्वरम्।

तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत्।। श्वे. 4.10

17 अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाभ्यात्ममायया।। गीता 4.6

18 श्वेताश्वतर 1.3

19 न तस्य कार्यकारणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च।। श्वे. 6.8

20 श्वेताश्वतरोपनिषद् 1.12 तथा 1.9

21 द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्व जाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति।। श्वे. 4.6

22 एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च।। श्वे. 6.11

23 अणोरणीयान्महतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः।। श्वे. 3.20

24 श्वेताश्वतर 3.3,14,16

25 ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चजगत्यां जगत्। ईशो.

26 य एको जालवानी शत ईशनीभिः सर्वाल्लौकानीशत् ईशनीभिः।
य एवैक उद्भवे सम्भवे च य एतद्विदुरमृतास्ति भवन्ति।। श्वे. 3.1

27 तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदुचन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदापस्तत्प्रजापतिः।। श्वे. 4.1

28 एको हि रुद्रो न द्वितीयाय तस्थु। श्वे. 3.2,
या रुद्र शिवा तनूरघोरा...श्वे. 3.5

29 श्वे. 5.3

30 नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधाति कामान्।
तत्कारणं सांख्ययोगाधिगम्यं ज्ञात्वा देवमुच्यते सर्वपाशैः।। श्वे. 6.13

31 (क) ततः परं ब्रह्म परं बृहन्तं यथा निकायं सर्वभूतेषु गूढम्।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारमीशं तं ज्ञात्वाऽमृता भवन्ति।। श्वे. 3.7

(ख) वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।। श्वे. 3.8

32 यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः प्रकाशन्ते महात्मन इति।। श्वे. 6.23